शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जून 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

संस्कृत रूपकों में पिता-पुत्री सम्बन्ध: एक अध्ययन
(प्रारम्भ से लेकर दसवीं शताब्दी तक)

जहाँ आरा (शोधार्थी)
संस्कृत विभाग
अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय
अलीगढ, उत्तरप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

प्रायः कहा जाता है कि मनुष्य का उत्कर्ष उसके पारिवारिक जीवन के माध्यम से होता है। निःसन्देह यह बात बिल्कुल सत्य है। परिवार समाज का घटक या मूल है। सामाजिक सुदृढ़ता और सुव्यवस्था पारिवारिक सुदृढ़ता और सुव्यवस्था पर ही अवलम्बित होती है। कहा भी गया है कि परिवार सामाजिक जीवन की प्रथम पाठशाला है। वास्तव में परिवार अथवा कुटुम्ब जीवन की वह इकाई है जिसमें मनुष्य जन्म से लेकर मृत्यु तक की सारी क्रियाओं को सम्पादित करता है। इस कर्मसम्पादन की प्रक्रिया में परिवार के एक-एक सदस्य का एक दूसरे के प्रति निश्चित दायित्व होता है। जैसे पिता-पुत्र, पिता-पुत्री सम्बन्ध, माता-पुत्र, माता-पुत्री-सम्बन्ध, भाई-भाई, भाई-बहिन सम्बन्ध, पति-पत्नी व अन्य सम्बन्धियों के साथ सम्बन्ध इत्यादि। इन्हीं संबंधों की चर्चा साहित्यकार अपने साहित्य में करते रहें हैं। साहित्य व्यावहारिकता का पाठ पढाने की भूमिका का निर्वाह भी करता है। प्रस्तुत शोध पत्र में इसी पर विचार किया गया है।

प्रस्तावना

वर्तमान समय में जिस प्रकार से पुत्री का विवाह परिवार में पिता के लिए चिन्ता का विषय है ठीक उसी प्रकार तत्कालीन समाज में भी पिता, पुत्रियों के विवाह हेतु चिन्तित होते थे। पुत्री का जन्म, उसके उपयुक्त वर की चिन्ता, विवाहोपरान्त उसके सुखी जीवन के लिए निरन्तर चिन्तित रहना मानो प्रत्येक पिता की समस्या थी। संस्कृत रूपकों में इस तथ्य के स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं। 'अविमारक' नाटक में कुन्तिभोज कुरी के विवाह को लेकर चिन्तित दिखाई देते हैं। उनके अनुसार-

कन्यापितुर्हि सततं बहु चिन्तनीयम्।**1**

सचमुच कन्या के पिता को बहुत चिन्ता करनी पड़ती है। आगे वह अपनी पत्नी से कहते हैं-

विवाहा नाम बहुशः परीक्ष्य कर्तव्या भवन्ति।**2**

विवाह बहुत सोचकर करना होता है।

तत्कालीन समाज में उचित समय पर कन्या का विवाह न करने पर पिता को समाज में आलोचनाओं का पात्र भी बनना पड़ता था। प्रतिज्ञायौगन्धरायण में राजा प्रद्योत अपनी पुत्री वासवदत्ता के विवाह के विषय में चिन्तित दिखाई देते हैं-

अदत्तेत्यागता लज्जा दत्तेति व्यथितं मनः।
धर्मस्नेहान्तरे न्यस्ता दुःखिताः खलु मातरः।।**3**

न देने पर (कन्यादान न करने से) तो लज्जा आती है और विवाह कर देने पर मन दुःखी होता है। इस प्रकार धर्म और स्नेह के बीच में पड़कर माताओं को बड़ा कष्ट होता है।

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जून 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

राजा के अनुसार पुत्री के लिए सर्वगुणसम्पन्न वर कठिन प्रयासों के उपरान्त ही प्राप्त होता है-

कन्याया वरसम्पत्तिः पितुः प्रायः प्रयत्नतः।
भाग्येषु शेषमायत्तं दृष्टपूर्वं न चान्यथा।।**4**

प्रायः कन्या के लिए सर्वगुण सम्पन्न वर पिता के प्रयत्न से उपलब्ध होता है, शेष बातें तो दैवाधीन हैं। वस्तुतः अच्छी तरह विचार कर लिया हुआ कार्य निष्फल नहीं होता।

पुत्री के विवाह को लेकर पिता जनक अध्येय रूपकों में अनेकत्र उद्वेलित दिखाई देते हैं5, क्योंकि सीता स्वयंवर में रावण ने सीता के विवाह के लिए प्रस्ताव भेजा है। पुत्री के उपयुक्त वर के साथ विवाह के उपरान्त पिता आश्वस्त होते थे। अभिज्ञानशाकुन्तल में पिता कण्व की यह उक्ति उनके आश्वस्त होने का प्रमाण है-

अर्थो हि कन्या परकीय एव तामद्य संप्रेष्य परिग्रहीतुः।
जातो ममायं विषदः प्रकामं प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा।।**6**

कन्या सचमुच पराई सम्पत्ति ही होती है। आज उसे पति के घर भेजकर मेरा मन वैसे ही निश्चिन्त हो गया है जैसे किसी की धरोहर लौटा दी हो।

पिता का पुत्री से व्यवहार

अध्येय रूपकों के अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज में कन्या को पुत्र के समान सुख-सुविधाएँ सुलभ थीं तथा उनकी इच्छाओं और भावनाओं का आदर किया जाता था। इसके विपरीत पुत्रियाँ अपने पिता की इच्छाओं का पूरी तरह सम्मान चाहते हुए भी अपने अभिलषित प्रिय के साथ विवाह कर लेती थीं जिसका पिता को अनुमोदन करना ही पड़ता था। यह एक पिता की विवशता थी। अविमारक नाटक में कुर□ी अन्तःपुर में अविमारक के साथ सुख की रात्रियाँ व्यतीत करती है।**7** वह अन्त्यज के साथ राजमहल में एक वर्ष तक सुखोपभोग करती है तभी तो इन दोनों को मिलाने में सक्रिय भूमिका निभाने वाली धात्री को इससे कुल के नष्ट होने का भय है।8

जहाँ एक ओर पिता पुत्री के विवाह को लेकर चिन्तित हैं, लोगों से इस विषय में विचार-विमर्श कर रहे हैं, वहीं कुरी को अपने पिता के कष्टों की कोई परवाह नहीं दिखती। वह पिता को अंधेरे में रखकर अभिलषित प्रेमी के साथ स्वेच्छाचार में रत दिखाई पड़ती है। पिता इस विषय में अज्ञ हैं और वह काशिराज को कुरी के वररूप में चयन कर लेते हैं, किन्तु कन्या के आचरण के विषय में जानने पर वह उसके लिए प्रस्तावित जयवर्मा का विवाह अपनी दूसरी पुत्री सुमित्रा से करवाकर किसी तरह इस समस्या को सुलझाने का प्रयास करते हैं।**9** सोचने की बात यह है कि जब पिता को अपनी पुत्री के इस दुष्कर्म की सूचना मिली होगी, तो उनके हृदय को कितना आघात पहुँचा होगा ? समाज में लोगों से कितनी कटाक्षयुक्त बातें सुनने को मिली होंगी? लोकापवाद तो अलग, उन्हें अपनी पुत्री के भविष्य को लेकर कितनी चिन्ता हुई होगी ? जो भी हो, कुरी का अविमारक के साथ विवाह सामाजिक मर्यादा के विरुद्ध था। दूसरी ओर अभिज्ञानशाकुन्तल में शकुन्तला एक तापस कन्या है। वह तपोवन की पवित्र भूमि में ही पली-बढ़ी है और तपोवन की इसी पवित्र भूमि में तापस धर्म के विरुद्ध पिता की अनुपस्थिति में दुष्यन्त के साथ गान्धर्व विवाह कर लेती है। इस हेतु उसने आश्रम के किसी वरिष्ठ सदस्य से स्वीकृति भी नहीं ली और न आश्रम में ऋषि-मुनियों को सूचना दी। और तो और, पिता कण्व के सोमतीर्थ से लौटने की भी प्रतीक्षा नहीं की। उसने पिता को उसके अधिकारों से पूरी तरह

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जून 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

वंचित रखा। फिर भी पिता कण्व अपनी पुत्री के इस विवाह का स्नेहवश इन उक्तियों के द्वारा अनुमोदन करते हुए दिखाई देते हैं-

संकल्पितं प्रथममेव मया तवार्थे
भर्तारमात्मसदृषं सुकृतैर्गता त्वम्।
चूतेन संश्रितवती नवमालिकेय-
मस्यामहं त्वयि च संप्रति वीतचिन्तः।।**10**

मैंने तेरे लिए जैसे पति का संकल्प किया था, तूने अपने पुण्य-प्रभाव से वैसा पति पा लिया है और इस वन-ज्योत्स्ना को भी आम का ठीक सहारा मिल गया है। अब मैं तुम दोनों की चिन्ता से छूट गया हूँ।

मालतीमाधव प्रकरण में पिता भूरिवसु जानते हैं कि उनकी कन्या मालती माधव से प्रेम करती है और पूर्व में उनकी भी यही इच्छा थी कि वह अपनी पुत्री का विवाह अपने मित्र देवरात के पुत्र माधव से करेंगे। परन्तु राजा अपने नर्मसचिव के साथ मालती का विवाह करवाने की इच्छा प्रकट करते हैं और भूरिवसु अधीनस्थ अमात्य होने के कारण राजाज्ञा के समक्ष विवश होकर अपनी पुत्री मालती को नन्दन के हाथ सौंपने का निश्चय कर बैठते हैं।**11** पिता के इस निश्चय के सामने मालती इस प्रस्ताव का विरोध नहीं करती। उसके लिए पिता की प्रसन्नता के सामने अपने दुःख का कोई भी स्थान नहीं है-

ज्वलतु गगने रात्रौ रात्रावखण्डकलः शषी
दहतु मदनः किं वा मृत्योः परेण विधास्यतः।
मम तु दयितः श्लाघ्यस्तातो जनन्यमलान्वया
कुलममलिनं न त्वेवायं जनो न च जीवितम्।।**12**

प्रत्येक रात्रि के समय आकाश में सम्पूर्ण कलाओं से परिपूर्ण चन्द्रमा मुझे जलाएं अथवा कामदेव भी मुझे दग्ध करें। ये लोग मृत्यु से अधिक कर ही क्या सकते हैं ? किन्तु मेरे लिए पिताजी प्रिय और प्रशंसनीय हैं, निर्मल वंश में उत्पन्न माताजी प्रिय हैं और इसी तरह सर्वथा निष्कल□□मेरा वंश भी मुझे प्रिय है। परन्तु ये माधव और मेरा अपना प्राण प्रिय नहीं है। अतः मैं कुलकन्या के प्रतिकूल साहस का आचरण कदापि नहीं कर सकती।

परन्तु कामन्दकी तथा अवलोकिता के सहयोग से वह माधव के साथ विवाह कर लेती है।**13** अन्त में मालती-माधव के सच्चे प्रेम के आगे हारकर भूरिवसु**14** व राजा**15** भी विवाह का अनुमोदन करते दिखाई देते हैं। तत्कालीन समाज में यदा-कदा पति द्वारा पुत्री के प्रत्याख्यान की समस्या से चिन्तित एवं दुखी पिता की दयनीय स्थिति भी रूपकों में देखने को मिलती है। उत्तररामचरित में पति द्वारा निष्कल□ एवं निष्पाप सीता के निर्वासन से जनक को इतना दुःख पहुँचता है कि वह आत्महत्या के लिए उद्यत हो जाते हैं। किन्तु औपनिषद ब्रह्मर्षियों की वाणी उन्हें इस काम से रोकती है।**16** उनको केवल एक ही बात का दुःख है कि रामभद्र ने सीता के निर्वासन में शीघ्रता से काम लिया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विवाह से पूर्व कन्या के किसी पुरुष के साथ यौन-सम्बन्धों से न केवल सामाजिक मर्यादा ही टूटती थी, अपितु व्यवस्था भंग होने से अराजकता फैलने का भय रहता था। अविमारक, अभिज्ञानशाकुन्तल तथा मालतीमाधव रूपकों में पिता को अपनी पुत्रियों के विवाह की सूचना उनके विवाह कर लेने के पश्चात् मिली है। ऐसी स्थिति में लोकनिन्दा के भय से पिता के पास यथाशीघ्र विवाह के अतिरिक्त दूसरा कोई विकल्प नहीं होता था। अतः कुन्तिभोज ने अविमारक से अग्नि को साक्षी मानकर विवाह करवाकर और कण्व ने दुष्यन्त-शकुन्तला तथा भूरिवसु ने मालती-माधव

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जून 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

के प्रणय-विवाह में अपनी त्वरित सहमति देकर उन्हें स्वतंत्र कर दिया है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि कुरी, शकुन्तला और मालती ने कुल की परम्परा और मर्यादा को तोड़कर अपने प्रेमियों के साथ विवाह किया है। परन्तु एक प्रश्न यह भी उठता है कि यदि विवाह के समय कन्या को भी निर्णय का अधिकार दिया जाता तो विवाह में ऐसी बाधाएँ नहीं आतीं और इस प्रकार कोई पुत्री अपने पिता से न कहती जिस प्रकार से मालतीमाधव प्रकरण में मालती अपने पिता के विषय में कहती है-

हा तात! त्वमपि मम नामैवमिति जितं भोगतृष्णया।**17**

हाय पिताजी! आप भी इस प्रकार मेरे जीवन के विषय में निरपेक्ष होकर भोग-तृष्णा के द्वारा जीत लिए गये हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 अविमारक, 1/2

2 वही, 1/पृ0 6

3 प्रतिज्ञायौगन्धरायण, 2/7

4 वही, 2/5

5 (1) जनकः- (सखेदम्) भगवन्नन्तथ्य! गृहानुपगताय सीतार्थिने ल□□श्वराय किमुत्तरम् ?

बालरामायण, 1/ पृ018

(2) माहेश्वरो दशग्रीवः क्षुद्रा□sन्ये महीभुजः।

पिनाकारोपणं शुल्कं हा सीते!किं भविष्यति।।

हनुमन्नाटक, 1/17

6 अभिज्ञानशाकुन्तल, 4/22

7 एष खलु संवत्सरोऽतिक्रान्तो भर्तृदारिकाया अविच्छिन्नसुखसम्भोगेन रतिं कृत्वा। अस्माकं पुनर्गोष्ठीजनस्योत्तरकुरुवासः संवृत्तः। अद्य पुनर्महाराजेन विदित एष खलु वृत्तान्त इति श्रुत्वा सीदतीव शरीरम्। अविमारक,4/पृ0 88

8 यद्येवं क्रियते, राजकुलं दूषितं भवति। वही, 2/पृ0 35

9 जयवर्मणे सुमित्रा प्रदीयतां काशिराजे। वही, 6/पृ0 173

10 अभिज्ञानशाकुन्तल, 4/13

11 लाविका-अस्त्येतद्यन्नरेन्द्रवचनानुरोधेन नन्दनस्य प्रतिपन्ना मालतीति सकलो जनोऽमात्यं जुगुप्सते। मालतीमाधव,

2/पृ0 89

12 वही, 2/2

13 कामन्दकी- वत्सौ मालतीमाधवौ! इतो निर्गत्य वृक्षगहनेन गम्यतामुद्वाहम□लार्थम्। अस्ति तत्र दीर्घिकायाः

प□दुद्यानवाटः। सुविहितं तत्रैव वैवाहिकद्रव्यजातमवलोकितया भूय□। वही, 6/पृ0 250

14 वही, 10/16

15 वही, 10/23

16 उत्तररामचरित, 4/पृ0 237-238

17 मालतीमाधव, 2/पृ0 94